अनुवाद

जिस-जिस भी भाव का स्मरण करते हुए जीव देह को त्यागता है, उस उसको ही निःसन्देह प्राप्त होता है, क्योंकि वह जीवन में सदा उसी भाव से भावित रहा है।।६।।

तात्पर्य

इस श्लोक में बताया गया है कि देहान्त के संकटपूर्ण काल में अपने स्वभाव को किस प्रकार बदला जा सकता है। यह जिज्ञासा बहुधा होती है कि सद्गति के अनुकूल मनोस्थिति में मनुष्य का देहान्त किस साधन से हो सकता है? महाराज भरत ने अन्त समय में मृग-शावक का चिन्तन किया था जिससे उन्हें उसी योनि में जाना पड़ा। परन्तु मृग-वपु में भी उन्हें अपने पूर्वकर्मों की स्मृति बनी रही। अवश्य ही जीवनभर के कर्मों और विचारों के संचित संस्कार का अन्तकाल के चिन्तन पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार वर्तमान जीवन के कार्य-कलाप भावी जीवन को निर्धारित करते हैं। अतएव यदि कोई दिव्य श्रीकृष्णसेवा में मग्न रहे तो उसका अगला कलेवर चिन्मय होगा, प्राकृत नहीं। इस कारण **हरे कृष्ण** महान्त्र का कीर्तन अपने स्वभाव को दिव्य बनाने का सर्वोत्तम साधन है।

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्।।७।।

तस्मात् =इसलिए; **सर्वेषु कालेषु** =सब समय (प्रतिक्षण); **माम्** =मेरा; **अनुस्मर** =नित्य स्मरण कर; **युध्य च** =युद्ध भी कर; **मयि** =मुझ में; **अर्पित** =अर्पण किए; **मनः** =मन; **बुद्धिः** =बुद्धि (से युक्त हुआ); **माम्** =मुझ को; **एव** =ही; **एष्यसि** =प्राप्त होगा; **असंशयम्** =निःसन्देह।

अनुवाद

इसलिए हे अर्जुन! तू मेरे कृष्णरूप का निरन्तर चिन्तन कर और साथ-साथ युद्धरूपी स्वधर्म का आचरण भी कर। इस प्रकार अपनी क्रियाओं को मेरे अर्पण करके मन-बुद्धि को मुझमें एकाग्र करने से तू निःसन्देह मुझ को ही प्राप्त होगा।।७।।

तात्पर्य

अर्जुन को भगवान् का यह उपदेश सभी लौकिक कर्मपरायण मनुष्यों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। श्रीभगवान् ने स्वधर्म-त्याग का आदेश नहीं दिया है। कर्तव्य-पालन किया जा सकता है, परन्तु साथ ही **हरेकृष्ण** महामन्त्र का जप करते हुए श्रीकृष्ण का स्मरण रखना चाहिए। इससे सांसारिक दोषों से मुक्ति हो जायगी और मन-बुद्धि श्रीकृष्ण में अनुरक्त हो जायेंगे। कृष्णनाम-संकीर्तन करने से निःसन्देह परमधाम कृष्णलोक की प्राप्ति हो जाती है।

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्।।८।।